परम पूज्य आचार्य महाराजजी के श्री करकमलों में
नमोऽस्तु पूर्वक सादर सविनय समर्पित
अमरावती
६।५।२४

जैनधर्म पर

लोकमान्य तिलक का भाषण

—और—

प्रसिद्ध विद्वानोंकी सम्मतियां

—+—

संग्रहकर्ता व मुद्रक—
अजितकुमार जैन शास्त्री,

प्रो॰ अकलंक प्रेस—चूड़ी सराय, मुलतान
[वीर सं० २४६४]

प्रकाशक—

ला० गुमानीचन्द जैन,

मालिक फर्म—सठ घनश्यामदास छोगमल जैन

चूड़ी मराय, मुलतान शहर।

प्रथमवार २०००

विद्वानों की नामावली—

जिन्हों ने जैनधर्म पर निष्पक्ष होकर अपनी सम्मति दी है।

१– लोकमान्य बाल गंगाधर जी तिलक
२– महात्मा शिवव्रतलाल जी
३– डा० सतीशचन्द्रजी विद्याभूषण
४– डा० पं० गंगानाथ जी झा एम० ए०
५– महामहोपाध्याय पं० राममिश्र जी शास्त्री
६– ला० कन्नोमल जी जोधपुर
७– तुकाराम जी लट्ट बी० ए०, पी. एच. डी.
८– श्री० वरदाकान्त जी एम० ए०
९– स्वामी विरुपाक्ष वडियर वेदतीर्थ
१०– रा० रा० वासुदेव गोविन्द आप्टे बी० ए०
११– कवीन्द्र रवीन्द्रनाथ टैगोर
१२– ला० कन्नोमल जी एम० ए० सेशनजज
१३– ला० शिवप्रसाद जी सतारेहिन्द
१४– बैरिष्टर चम्पतराय जी
१५– डा० हर्मन जेकोबी जर्मनी
१६– डा० जोहन्नेस हर्टल जर्मनी
१७– डा० ए० गिरनाट फ्रांस
१८– मि० आवे जे० ए० डबाई मिशनरी
१९– जे० स्टीवेन्सन
२०– डा० मैक्समूलर
२१– डा० फुहरर
२२– मेजर जनरल जे० सी० आर० फर्लांङ्ग।
२३– इम्पीरियल गजेटियर आफ इंडिया
२४– मि० टी० डबल्यू राईस डेविस

धन्यवाद

इस ट्रैक्ट के प्रकाशन का आर्थिक-भार श्री घनश्यामदास छोगमल फर्म के मालिक श्रीयुत ला० गुमानीचन्द्र जी तथा ला० बुद्धसेन जी ने उठाया है। आप दोनों भ्राता स्व०श्रीमान सेठ छोगमलजी संघी के सुपुत्र हैं। अपने पूज्य पिताजी के स्मरणार्थ उन्होंने यह ट्रैक्ट प्रकाशित कराया है। एतदर्थ आपको धन्यवाद है। सेठ छोगमल जी का चित्र पुस्तक में अन्यत्र विद्यमान है।

इस ट्रैक्ट की बिक्री से जो रकम प्राप्त होगी वह अन्य ट्रैक्ट के प्रकाशन में व्यय होगी।

—अजितकुमार

[illegible] स्व० सेठ छोगमल जी संघी, मुलतान।

[आप [illegible] सरल स्वभाव एवं अच्छे धार्मिक व्यक्ति थे]
आपकी [illegible] दान करने की ओर लगी रहती थी
आपके सुपुत्र भी निरन्तर आपका अनुकरण
करते रहते हैं

भारतवर्ष के प्रख्यात नेता

और

संसारके प्रसिद्ध विद्वान

लोकमान्य बालगंगाधर तिलक

—का—

भाषण

[जो कि उन्होंने जैन कान्फ्रेंस के तीसरे अधिवेशन पर ३० नवम्बर सन १९०४ को बड़ोदामें मराठीमें दिया था]

'जैनधर्म की प्राचीनता'

जैनधर्म प्राचीन होने का दावा रखता है। मैं यद्यपि जैन नहीं हूं, परन्तु मैंने जैनधर्म के इतिहास तथा प्राचीन ग्रंथों का अवलोकन किया है, और जैनधर्मी मित्रों के संसर्ग से बहुत कुछ परिचय भी पाया है, इस लिये इन दो आधारों से आज जैनधर्म के विषय में कुछ कहने की इच्छा करता हूं।

व्याख्यान किस भाषामें दिया जावे यह विषम प्रश्न है। परन्तु मैं अंग्रेजी की अपेक्षा मराठी में देना अच्छा समझता हूं, क्योंकि मराठी भाषा श्रोताओं का अधिक भाग समझ सकेगा ऐसा जान पड़ता है। मैं जैनधर्म के विरुद्ध बोलने के लिये खड़ा नहीं हुआ हूं परन्तु उसके अनुकूल थोड़े से शब्द कहना चाहता हूं। जैनधर्म विशेषकर ब्राह्मणधर्म के साथ अत्यन्त निकट सम्बन्ध रखता है। दोनों धर्म प्राचीन और परस्पर सम्बन्ध रखने वाले हैं। जैन हिन्दू ही हैं, हिन्दुओं से बाहिर नहीं हैं, वे हिन्दुओं से पृथक् नहीं गिने जा सकते। अनेक महाशय जैनियों को हिन्दूधर्म से पृथक् करते हैं और हिन्दूधर्म से जैनधर्म को निराला समझते हैं परन्तु यथार्थ में यदि देखा जावे तो वह हिन्दूधर्म ही है, जैन समुदाय हिन्दू कौम में ही है। जिस हिन्दूधर्म में अन्य अनेक धर्मों की गणना होती है, उसी हिन्दूधर्म में जैनधर्म की भी गणना है। अनेकोंने भेद बतलाया है परन्तु वह भेद यथार्थ नहीं है। जैनधर्म और ब्राह्मणधर्म हिन्दूधर्म ही हैं।

ग्रन्थों तथा सामाजिक व्याख्यानों से जाना जाता है कि 'जैनधर्म अनादि है' यह विषय निर्विवाद तथा मतभेद रहित है, मुतरां इस विषय में इतिहास के दृढ़ सबूत हैं। और निदान ईस्वी सन से ५२६ वर्ष पहिले का तो जैनधर्म सिद्ध है ही। हिन्दूधर्म के परिचयी जानते हैं कि शकवालों के शक चल रहे हैं, मुसलमानों का शक, ईसाइयों का शक,

शालिवाहन शक, इसी प्रकार जैनधर्म में महावीर स्वामी का शक चलता है, जिसे चलते हुए २४०० वर्ष हो चुके हैं। शक चलाने की कल्पना जैनी भाइयोंने ही उठाई थी। वीर शकके पहिले युधिष्ठिरका शक चलता था, ऐसा कहा जाता है परन्तु उस कल्पनाका वर्तमान समयसे कुछ सम्बन्ध नहीं है।

यद्यपि जैनधर्म प्राचीनता में पहिले नम्बर नहीं है तथापि प्रचलित धर्मों में जो प्राचीन धर्म हैं उनमें यह प्राचीन है। जैनधर्म की प्रभावना महावीर स्वामी के समय में हुई थी। महावीर स्वामी जैनधर्म को पुनः प्रकाश में लाये; इस बात को आज २४०० वर्ष व्यतीत हो चुके। उसी समय से जैनधर्म अस्खलित रीति से चल रहा है, इसी प्रकार ब्राह्मण अथवा हिन्दूधर्म प्राचीन है वर्तमान में हिन्दू हैं वे एक समय चार वर्णों में विभक्त थे। उनमें के ही जैनी हैं। ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य, शूद्र ये चार वर्ण थे इन्हीं चार वर्णोंमें से जैनियों का समुदाय उत्पन्न हुआ है। इस कारण से दोनों धर्मों की समानता आज तक व्यक्त हो रही है। इन दोनों धर्मों की एकता प्रकट रीति पर जानी जा सकती है और पृथकता की भ्रान्ति का निवारण अभ्यास से हो सकता है क्योंकि अब इस भ्रान्ति के टिकने योग्य स्थान नहीं है।

गौतम बुद्ध महावीर स्वामीका शिष्य था, ऐसा पुस्तकों से विदित होता है। जिससे स्पष्ट जाना जाता है कि बौद्धधर्मकी स्थापना के प्रथम जैनधर्म का प्रकाश फैल रहा था, यह बात

विश्वास करने योग्य है। गौतम और बुद्ध के इतिहासमें २० वर्षका अन्तर है। चौबीस तीर्थङ्करोंमें महावीर स्वामी अन्तिम तीर्थङ्कर थे। इससे भी जैनधर्म की प्राचीनता जानी जाती है। बौद्धधर्म [illegible] से हुआ यह बात निश्चित है। बौद्धधर्म के तत्व जैनधर्म के तत्वों के अनुकरण हैं।

ब्राह्मणधर्म पर जैनधर्म की छाप

महाशयो ! यहां पर मुझे एक आवश्यक बात प्रगट करनी है वह यह है कि अनुमान ४००, ५०० वर्ष पहिले जैनधर्म और ब्राह्मणधर्म इन दो धर्मों का तत्व सम्बन्धी झगड़ा चल रहा था [illegible] मतभेद तथा विचारान्तरों के कारण [illegible] [illegible] निरन्तर आया करते हैं जैसा यह भी एक मौका [illegible] एक जीतता है और दूसरा हारता है इसमें मतभेद होता है परन्तु विशेष अन्तर गिनने योग्य नहीं होता। श्रीमान महाराज [illegible] ने पहिले दिन कान्फ्रेन्स में जिस प्रकार कहा था उसी प्रकार "अहिंसा परमो धर्मः" इस उदार सिद्धान्त ने ब्राह्मण धर्म पर चिरस्मरणीय (छाप मोहर) मारी है यह [illegible] यज्ञादिकों में पशुओं का वध हो कर जो "यज्ञार्थ पशु हिंसा" आज कल नहीं होती है, जैनधर्म ने यही एक बड़ी भारी छाप ब्राह्मणधर्म पर मारी है। पूर्व कालमें यज्ञ के लिये असंख्य पशु-हिंसा होती थी इसके प्रमाण मेघदूत काव्य तथा और भी अनेक ग्रन्थों से मिलते हैं। रन्तिदेव नामक राजा ने यज्ञ किया था, उसमें इतना प्रचुर पशुवध

हुआ था कि नदी का जल खून से रक्त वर्ण हो गया था। उसी समय से उस नदी का नाम चर्मवती प्रसिद्ध है। पशु-वध से स्वर्ग मिलता है, इस विषय में उक्त कथा साक्षी है, परन्तु इस घोर हिंसा का ब्राह्मणधर्म से बिदाई ले जाने का श्रेय (पुण्य) जैन के हिस्से में है।

झगड़े की जड़ हिंसा

ब्राह्मणधर्म और जैनधर्म दोनों के झगड़े की जड़ हिंसा थी, वह अब नष्ट होगई है। और इस रीति से ब्राह्मण धर्म अथवा हिन्दूधर्म को जैनधर्म ने अहिंसा धर्म बनाया है हिंसा किसी जीव के मारने अथवा किसीका जीव लेनेको कहते हैं। संसार के लगभग सम्पूर्ण धर्मों में हिंसाका निषेध किया है। बौद्ध धर्म में निषेध है, परन्तु चीन आदि देशवासी बौद्धों में हिंसाका पारावार नहीं। हिन्दुस्तान से बौद्धधर्म के विनाश होनेका यही एक कारण है। बाईबिल में कहा है कि (Do not Kill) हिंसामत करो। परन्तु इसका अर्थ ईसाई लोग इतना ही करते हैं कि "खून मत करो"। इस रीतिसे बाईबिल की आज्ञा का निराला ही अर्थ किया जाता है।

हजारों मनुष्योंका युद्धमें संहार होता है। परन्तु उसमें राजाकी आज्ञा ही प्रधान कारण बतलाई जाती है। वास्तवमें अहिंसा का बहुत थोड़ा अर्थ किया जाता है। हिन्दमें जो लाखों पशुओं का वध होता है उसके पापका बोझ बाईबिल का अर्थ समझाने वालों के सिर पर है।

ब्राह्मण धर्म पर जो जैनधर्म ने अक्षुण्ण छाप मारी है उसका यश जैनधर्म के ही योग्य है। अहिंसा का सिद्धान्त जैनधर्म में प्रारम्भ से है। इस तत्व को समझने की त्रुटि के के कारण बौधद्धर्म अपने अनुयायी चीनियों के रूपमें सर्व-भक्षी होगया है।

ब्राह्मण और हिन्दूधर्म में मांसभक्षण और मदिरापान बन्द होगया, सो यह भी जैनधर्मका ही प्रताप है। अहिंसा और दया की विशेष प्रीतिसे कई एक लोगों के हृदय हिंसा के दुष्कृत्यों से दुखने लगे और उन्होंने आवेशवश स्पष्ट कह दिया कि जिस वेदमें हिंसा है हमको वह वेद मान्य नहीं, जो वेद हिंसा से प्रसन्न होता है उस वेदकी हमको आवश्यकता नहीं। और जिन ग्रंथों में हिंसाका विधान हो वे हमसे दूर रखे जांय। दया और अहिंसा की ऐसी ही स्तुत्य प्रीति ने जैनधर्म को उत्पन्न किया है, स्थिर रक्खा है, और उसी से चिरकाल तक स्थिर रहेगा। इस अहिंसाधर्म की छाप जब ब्राह्मणधर्म पर पड़ी और हिन्दुओं को अहिंसा पालन करने की आवश्यकता हुई तब यज्ञ में पिष्ट पशु का विधान किया गया। सो महावीर स्वामी का उपदेश किया हुआ धर्म-तत्व सर्वमान्य हो गया और अहिंसा जैनधर्म तथा ब्राह्मणधर्म में मान्य हो गई। ब्राह्मणधर्म में दूसरी त्रुटि यह थी कि चारों वर्णों अर्थात ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य तथा शूद्रों को समान अधिकार प्राप्त नहीं था। यज्ञ याग आदि कर्म केवल

ब्राह्मण ही करते थे, क्षत्री और वैश्यों को यह अधिकार नहीं था, और शूद्र बेचारे तो ऐसे बहुत विषयों में अभागे बनते थे इस प्रकार मुक्ति प्राप्त करने की चारों वर्णों में एक सी छुट्टी नहीं थी। जैनधर्म ने इस त्रुटि को भी पूर्ण किया और पीछे से श्रीमान शङ्कराचार्य ने जो ब्राह्मणधर्म का उपदेश किया है उसमें धर्म का मुख्य तत्व अहिंसा बतलाया गया है। भगवद् गीता में यह भी कहा गया है कि भक्तियोग से स्त्रियें तथा शूद्र मोक्ष पा सकते हैं। जैनधर्म ने जिस प्रकार मोक्ष का मार्ग सब के लिये खुला रक्खा है, उसी प्रकार ब्राह्मण धर्म ने भी अपने मान्य ग्रन्थों के द्वारा बतलाया है अर्थात अहिंसा और मोक्ष का अधिकार इन दोनों ही धर्मों में एक सरीखा माना गया है जैनधर्मी वेदों को नहीं मानते हैं, इसी प्रकार ईसाई आदि भी वेदों को नहीं मानते हैं परन्तु जैनधर्म यह एक हिन्दूधर्म है तथा ब्राह्मणधर्म से बहुत सम्बन्ध रखता है

पूर्वकाल में अनेक ब्राह्मण वा जैनधर्मके धुरन्धर विद्वान हो गये हैं और विद्या प्रसंग में दोनों का पहिले से प्रगाढ़ सम्बन्ध है ब्राह्मणधर्म जैनधर्म से मिलता हुआ है इस कारण टिक रहा है। बौद्धधर्म विशेष अमिल होने के कारण हिन्दुस्तान से नाम शेष हो गया। कुमारिल भट्ट और शङ्कराचार्य का बड़ा वाद विवाद हुआ था। परन्तु जय तथा पराजय कुरीपाटकिन तथा कुरीकी के समान ही हुई थी।

जैनधर्म तथा ब्राह्मणधर्मका पीछेसे कितना निकट सम्बन्ध हुआ है सो ज्योतिष शास्त्री भास्कराचार्य के ग्रन्थ से विशेष

उपलब्ध होता है। उक्त आचार्य ने ज्ञान दर्शन और चरित्र (Charactor) को धर्म के तत्व बतलाये हैं। उन्हों ने कहा है कि ब्राह्मणधर्म और जैनधर्म विशेष सम्बन्ध से वेष्टित हैं एक ही प्रजा के दोनों धर्म हैं। इन दोनों धर्मों का ऐसा निकट सम्बन्ध निरन्तर ध्यान में रखना चाहिये, और परस्पर ऐक्य बढ़ाने का प्रयत्न करना चाहिये। स्वर्गीय मि० वीरचन्द राघव जी गांधी जो अमेरिका को गये थे और चिकागो के के प्रदर्शन के समय स्वामी विवेकानन्द जी के साथ धर्म के व्याख्यान देते थे, उन्हों ने मुझ से कहा था कि विवेकानन्द और मैं दोनों ही हिन्दूधर्म का बोध अमेरिकन लोगों को दे रहे हैं। भाइयो! अपने धर्म हिन्दुस्तान से बाहिर क्यों नहीं स्थापित होने चाहिये? अंग्रेज सरकार ने हमारे हाथ में हथियार रहने देने की कोई आवश्यकता नहीं समझी और हममें उसकी प्रवृत्ति भी नहीं हैं। परन्तु अपने धर्म रूपी हथियारों से हम को सब देशों से विजय-लाभ करना चाहिये हम परस्पर अपने धर्मानुकूल रहके चाहे जिस जगह एकता से रह सकेंगे। हम इस समय भी यदि विजय लाभ नहीं करें तो हमारा आलस्य और अज्ञान है। सम्पूर्ण जैनी भाइयों तथा ब्राह्मणधर्म पालने वालों को परस्पर एक मां बाप के युगल पुत्रों की तरह तथा एक ही पुरुष के दायें बायें हाथ की तरह एक समझ के परस्पर हाथ में हाथ मिला के अपने अहिंसा धर्म के अभ्युदय के लिये भेद बुद्धि रहित हो कर प्रयत्न करना चाहिये। काल पा कर इस कार्य में यश अवश्य मिलेगा।

जैनधर्म की प्राचीनता तथा जैन सिद्धांत के विषय में विद्वानों के—

अभिमत

[भारतीय विद्वान]

१

भारत-रत्न लोकमान्य तिलक अपने केसरी पत्र में (१३ दिसम्बर सन् १९०४ को) लिखते हैं—

ग्रन्थों तथा सामाजिक व्याख्यानों से जाना जाता है कि जैन धर्म अनादि है। यह विषय निर्विवाद तथा मतभेद रहित है। सुतरां इस विषय में इतिहास के दृढ़ सबूत हैं और निदान ईस्वी सन् से ५२६ वर्ष पहले का तो जैन धर्म सिद्ध है ही। महावीर स्वामी जैन धर्म को पुनः प्रकाश में लाये इस बात को आज २४०० वर्ष व्यतीत हो चुके हैं। बौद्ध धर्म की स्थापना के पहले जैन धर्म फैल रहा था यह बात विश्वास करने योग्य है— चौबीस तीर्थङ्करों में महावीर स्वामी अन्तिम तीर्थङ्कर थे, इससे भी जैन धर्म की प्राचीनता जानी जाती है। बौद्ध धर्म पीछे से हुआ यह बात निश्चित है।

२

अनेक हिन्दी उर्दू पुस्तकों के लेखक तथा अनेक पत्रों के सम्पादक, सुप्रसिद्ध विद्वान श्रीमान महात्मा शिवव्रतलाल जी वर्मा एम० ए०—

(आपने स्वसम्पादित उर्दू मासिक पत्र साधुमें जनवरी १६११ को 'महावीर स्वामी का पवित्र जीवन' शीर्षक एक लेख भगवान महावीर तथा जैन साधुओं के विषय में लिखा था। उसका सारांश निम्न प्रकार है)

(१) "गये दोनों जहान नजर से गुजर, तेरे हुस्न का कोई बशर न मिला।"

(२) यह जैनियों के आचार्य गुरू थे। पाक-दिल, पाक-खयाल, मुजस्सम-पाकीजगी थे। हम इनके नाम पर, इनके काम पर और इनके बेनजीर नफ्सकुशी व रियाजत की मिसाल पर, जिस क़दर नाज (अभिमान) करें बजा (योग्य) है।

(३) हिन्दुओ! अपने इन बुजुर्गों की इज्जत करना सीखो..... तुम इनके गुणों को देखो, उनकी पवित्र मूरतों का दर्शन करो, उनके भावों को प्यार की निगाह से देखो, वह धर्म कर्म की झलकती हुई चमकती दमकती मूर्तें हैं.....उनका दिल विशाल था, वह एक बेपायाकनार समुन्दर था जिसमें मनुष्य प्रेम की लहरें जोर शोर से उठती रहती थीं और

सिर्फ मनुष्य ही क्यों उन्होंने संसार के प्राणी मात्र की भलाई के लिये सब का त्याग किया। जानदारों का बहता खून रोकने के लिये अपनी जिन्दगी का खून कर दिया। यह अहिंसा की परम ज्योति वाली मूर्तियां हैं।

ये दुनियांके जबर्दस्त रिफार्मर, जबरदस्त उपकारी और बड़े ऊंचे दर्जे के उपदेशक और प्रचारक गुजरे हैं। यह हमारी कौमी तवारीख (इतिहास) के कीमती (बहुमूल्य) रत्न हैं। तुम कहां और किनमें धर्मात्मा प्राणियों की खोज करते हो इन्हीं को देखो इनसे बेहतर साहबे कमाल तुमको और कहां मिलेंगे। इनमें त्याग था, इनमें वैराग्य था, इनमें धर्मका कमाल था। यह इन्सानी कमजोरियों से बहुत ही ऊंचे थे। इनका खिताब 'जिन' है। जिन्होंने मोहमाया को, मन और काया को जीत लिया था। यह तीर्थङ्कर हैं। इनमें बनावट नहीं थी, दिखावट नहीं थी, जो बात थी साफ साफ थी। यह वह लासानी (अनुपम) शख्सीयतें हो गुजरी हैं जिनको जिस-मानी कमजोरियों व ऐबों के लिये किसी जाहिरी पोशाक की जरूरत लाहक नहीं हुई। क्योंकि उन्हों ने जप-तप करके, योगका साधन करके अपने आपको मुकम्मिल और पूर्ण बना लिया था.....आदि आदि।

———

३

श्रीयुत महामहोपाध्याय डा० सतीशचन्द्र विद्याभूषण एम० ए., पी. एच. डी., एफ. आई. आर. ऐस., सिद्धान्त महोदधि प्रिंसिपल संस्कृत कालेज कलकत्ता।

आपने १६ दिसम्बर सन १६१३ को काशी (बनारस) नगर में जैनधर्म के विषय में व्याख्यान दिया उसके साररूप कुछ वाक्य उद्धृत करते हैं।

"जैन साधु———एक प्रशंसनीय जीवन व्यतीत करने के द्वारा पूर्ण रीति से व्रत, नियम और इन्द्रिय संयमका पालन करता हुआ जगत के सन्मुख आत्म संयमका एक बड़ा ही उत्तम आदर्श प्रस्तुत करता है। प्राकृत भाषा अपने संपूर्ण मधुमय सौन्दर्यको लिये हुये जैनियों की रचना में ही प्रगट की गई है।"

४

महामहोपाध्याय पं० गंगानाथ झा एम० ए०, डी० एल० एल० इलाहाबाद-"जबसे मैंने शंकराचार्य द्वारा जैन सिद्धान्तका खंडन पढ़ा है, तबसे मुझे विश्वास हुआ कि इस सिद्धान्तमें बहुत कुछ है जिसको वेदान्त के आचार्य ने नहीं समझा और जो कुछ अब तक मैं जैनधर्मको जान सका हूं उससे मेरा यह विश्वास दृढ़ हुआ है कि यदि वह जैनधर्मको

उसके असली ग्रंथों से देखने का कष्ट उठाते तो उनको जैन धर्मके विरोध करने की कोई बात नहीं मिलती।

५

श्रीयुत महामहोपाध्याय सत्य सम्प्रदायाचार्य सर्वान्तर पं० स्वामी राममिश्र जी शास्त्री भूत प्रोफेसर संस्कत कालेज बनारस।

आपने मिती पौष शुक्ला १ सं० १६६२ को काशीनगर में व्याख्यान दिया; उसमें के कुछ वाक्य उद्धृत करते हैं—

१- ज्ञान, वैराग्य, शान्ति, क्षान्ति, अदम्भ, अनीर्ष्या, अक्रोध, अमात्सर्य, अलोलुपता, शम, दम, अहिंसा समदृष्टि इत्यादि गुणों में एक २ गुण ऐसा है कि जहां वह पाया जाय वहां पर बुद्धिमान पूजा करने लगते हैं। तब तो जहां ये (जिनेन्द्र देव में) पूर्वोक्त सब गुण निरतिशय असीम होकर विराजमान हैं उनकी पूजा न करना अथवा ऐसे गुण पूजकों की पूजा में बाधा डालना क्या इन्सानियत का कार्य है।

२- मैं आपको कहां तक कहूं बड़े २ नामी आचार्यों ने अपने ग्रन्थों में जो जैन मत खण्डन का किया है वह ऐसा किया है जिसे सुन, देख कर हंसी आती है।

३- स्याद्वाद का यह (जैन धर्म) अभेद्य किला है उसके अन्दर वादी प्रतिवादियों के मायामय गोले नहीं प्रवेश कर सकते।

४– सज्जनो एक दिन वह था कि जैन सम्प्रदाय के आचार्यों के हुंकार से दसों दिशाएं गूंज उठती थीं।

५– जैन मत तब से प्रचलित हुआ है जब से संसार में सृष्टि का आरम्भ हुआ।

६– मुझे इसमें किसी प्रकार का उज्र नहीं है कि जैन दर्शन वेदान्तादि दर्शनों से पूर्व का है।

६

मि० कन्नोमल जी जोधपुर—(देखो The Theoso-Phist माह दिसम्बर सन १६०४ व जनवरी सन १६०५)

जैनधर्म एक ऐसा प्राचीन धर्म है कि जिसकी उत्पत्ति तथा इतिहास का पता लगाना एक बहुत ही दुर्लभ बात है। इत्यादि।

७

श्रीयुत तुकाराम कृष्ण शर्मा लद्दू बी. ए., पी. एच. डी., एम. आर. ए. एस. एम. ए. एस. बी. एम. जी. ओ. एस. प्रोफेसर संस्कृत शिला-लेखादि के विषय के अध्यापक क्वीन्स कालिज बनारस।

स्याद्वाद महाविद्यालय काशी के दशम वार्षिकोत्सव पर दिये हुये व्याख्यान में से कुछ वाक्य उद्धृत।

१– सबसे पहले इस भारतवर्ष में ऋषभदेव नामके महर्षि

उत्पन्न हुए। वे दयावान भद्रपरिणामी, पहिले तीर्थङ्कर हुये जिन्होंने मिथ्यात्व अवस्था को देख कर सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्ररूपी मोक्ष शास्त्रका उपदेश किया। बस यह ही जिन दर्शन इस कल्पमें हुआ। इसके पश्चात अजितनाथ से लेकर महावीर तक तेईस तीर्थङ्कर अपने २ समय में अज्ञानी जीवोंका मोह अन्धकार नाश करते रहे।

८

श्रीयुत वरदाकान्त मुखोपाध्याय एम० ए०—

(१) जैन निरामिष भोजी (मांस त्यागी) क्षत्रियों का धर्म है।

(२) जैनधर्म हिन्दूधर्म से सर्वथा स्वतन्त्र है उसकी शाखा या रूपान्तर नहीं है। मोक्समुलर का भी यह ही मत है।

(३) पार्श्वनाथ जी जैन धर्म के आदि प्रचारक नहीं थे परन्तु इसका प्रथम प्रचार ऋषभदेव जी ने किया था इसकी पुष्टि के लिये प्रमाणों का अभाव नहीं है।

(४) बौद्ध लोग महावीर जी को निर्ग्रन्थों अर्थात जैनियों का नायक मात्र कहते हैं स्थापक नहीं कहते, जर्मन डाक्टर लेकोबी का भी यह ही मत है।

(५) जैन धर्म ज्ञान और भाव को लिये हुए है और मोक्ष भी इसी पर निर्भर है।

९

श्री स्वामी विरुपाक्ष वडियर 'धर्म भूषण' 'पण्डित' 'वेद तीर्थ' 'विद्यानिधि' एम०, ए० प्रोफेसर संस्कृत कालेज इन्दौर स्टेट। आप का "जैनधर्म मीमांसा" नाम का लेख चित्रमय जगत में छपा है उसे 'जैन पथ प्रदर्शक' आगरा ने दीपावली के अंक में उद्धृत किया है उसके कुछ वाक्य उद्धृत किये जाते हैं–

(१) ईर्षा–द्वेष के कारण धर्म प्रचार को रोकने वाली विपत्ति के रहते हुए जैन शासन कभी पराजित न हो कर सर्वत्र विजयी ही होता रहा है। इस प्रकार जिसका वर्णन है वह 'अर्हन्तदेव साक्षात परमेश्वर (विष्णु) स्वरूप है इस के प्रमाण भी आर्य ग्रन्थों में पाये जाते हैं।

(२) उपरोक्त अर्हन्त परमेश्वर का वर्णन वेदों में भी पाया जाता है।

(३) एक बंगाली बैरिष्टर ने 'प्रेक्टिकलपाथ' नामक ग्रन्थ बनाया है। उसमें एक स्थान पर लिखा है कि ऋषभदेव का नाम मरीची प्रकृति वादी था, और वेद उसके तत्वानुसार होने के कारण ही ऋग्वेद आदि ग्रन्थों की व्याप्ति उसी के ज्ञान द्वारा हुई है। फलतः मरीची ऋषि के स्तोत्र, वेद, पुराण आदि ग्रन्थों में है और स्थान स्थान पर जैन तीर्थङ्करों का उल्लेख पाया जाता है, तो कोई कारण नहीं कि हम वैदिक काल में जैन धर्म का अस्तित्व न मानें।

(४) सारांश यह है कि इन सब प्रमाणों से जैन धर्मका उल्लेख हिन्दुओं के पूज्य वेद में भी मिलता है।

(५) इस प्रकार वेदों में जैन धर्म का अस्तित्व सिद्ध करने वाले बहुत से मन्त्र हैं। वेद के सिवाय अन्य ग्रन्थों में भी जैन धर्म के प्रति सहानुभूति प्रगट करने वाले उल्लेख पाये जाते हैं स्वामी जी ने इस लेख में वेद शिव पुराणादि के कई स्थानों के मूल श्लोक दे कर उस पर व्याख्या भी की है।

पीछे से जब ब्राह्मण लोगों ने यज्ञ आदि में बलिदान पर "मा हिंस्यात सर्वभूतानि" वाले वेद वाक्य पर हरताल फेर दी उस समय जैनियों ने हिंसामय यज्ञ, यागादि का विरोध करना आरम्भ किया था बस, तभी से ब्राह्मणों के हृदय में जैनों के प्रति द्वेष बढ़ने लगा, परन्तु फिर भी भागवतादि महापुराणों में ऋषभदेव के विषय में गौरवयुक्त उल्लेख मिल रहा है।

———

१०

रा० ब० वासुदेव गोविन्द आपटे बी० ए० इन्दौर के इस वाक्य—

"प्राचीन काल में जैनियों ने उत्कृष्ट पराक्रम वा राज्य-भार का परिचालन किया है।

२– जैनधर्म में अहिंसा का तत्व अत्यन्त श्रेष्ठ है।

३–जैनधर्म में यतिधर्म अत्यन्त उत्कृष्ट है इसमें सन्देह नहीं।

४– जैनियों में स्त्रियों को भी यति दीक्षा लेकर परोपकारी कृत्योंमें जन्म व्यतीत करनेकी आज्ञा है यह सर्वोत्कृष्ट है।

५– हमारे हाथ से जीव हिंसा न होने पावे— इसके लिये जैनी जितने डरते हैं इतने बौद्ध नहीं। बौद्धधर्मी देशों में मांसाहार अधिकता से जारी है। आप स्वतः हिंसा न करके दूसरे के द्वारा मारे हुये बकरे आदिका मांस खाने में कुछ हर्ज नहीं – ऐसे सुभीतेका अहिंसा तत्व जो बौद्धों ने निकाला था वह जैनियों को सर्वथा स्वीकार नहीं है।

६– जैनियों की एक समय हिन्दुस्तान में बहुत उन्नतावस्था थी। धर्म, नीति, राज कार्य धुरन्धरता, शास्त्रदान समाजोन्नति आदि बातों में उनका समाज इतर जनों से बहुत आगे था।

११

साहित्यरत्न डाक्टर रवीन्द्रनाथ टागौर कहते हैं— "महावीर ने हिंडिम नादसे हिन्दमें ऐसा संदेश फैलाया कि धर्म', यह मात्र सामाजिक रूढ़ि नहीं है परन्तु वास्तविक सत्य है, मोक्ष यह बाहरी क्रिया कांड पालने से नहीं मिलता परन्तु सत्य धर्म स्वरूप में आश्रय लेने से ही मिलता है

धर्म और मनुष्य में कोई स्थायी भेद नहीं रह सकता। कहते आश्चर्य पैदा होता है कि इस शिक्षा ने समाज के हृदय में जड़ करके बैठी हुई भावना रूपी विघ्नों को त्वरा से भेद दिया और देश को वशीभूत कर लिया, इसके पश्चात् बहुत समय तक इन क्षत्रिय उपदेशकों के प्रभाव बल से ब्राह्मणों की सत्ता अभिभूत हो गई थी।"

१२

साहित्य रत्न श्रीमान ला० कन्नोमल जी सेशन जज धौलपुर ने—

(ला० लाजपतिराय जी विरचित 'भारत वर्ष का इतिहास' में उल्लिखित कुछ मिथ्या आक्षेपों का उत्तर देते हुए २२-७-२३ के जैन पथ प्रदर्शक में एक बड़ा लेख प्रकाशित किया था उसका सारांश)

(१) सभी लोग जानते हैं कि जैनधर्म के आदि तीर्थङ्कर श्री ऋषभदेव स्वामी हैं। जिन का काल इतिहास की परिधि से कहीं परे है इन का वर्णन सनातनधर्मी हिन्दुओं के श्रीमद्भागवत पुराण में भी है। ऐतिहासिक गवेषणा से मालूम हुआ है कि जैन धर्म की उत्पत्तिका कोई काल निश्चित नहीं है प्राचीन से प्राचीन ग्रन्थों में जैन धर्म का हवाला मिलता है।

(२) श्री पार्श्वनाथ जी जैनों के तेईसवें तीर्थङ्कर हैं इन का समय ईसा से १२०० वर्ष पूर्व का है तो पाठक स्वयं विचार कर सकते हैं कि श्री ऋषभदेव जी का कितना प्राचीन काल होगा। जैन धर्मके सिद्धान्तों की अच्छिन्न धारा इन्हीं महात्मा के समय से बहती रही है। कोई समय ऐसा नहीं है जिसमें इनका अस्तित्व न हो। श्री महावीर स्वामी जैन धर्म के अन्तिम तीर्थङ्कर और प्रचारक थे न कि उसके आदि संस्थापक और प्रवर्त्तक।

(३) श्री महावीर स्वामी तो उन्हीं प्राचीन जैन सिद्धान्तों के प्रचारक थे जो आदि तीर्थङ्कर के समय से चले आये थे। इसमें कोई सन्देह नहीं कि आप उन सिद्धान्तों के एक अत्यन्त भव्य प्रभावशाली और अद्वितीय उपदेशक प्रचारक और संस्थापक थे। आपने उन सिद्धान्तों को बड़ी खूबी से समझाया है। पर आपने ऐसी बात कोई नहीं कही है जो उन सिद्धान्तों के प्रतिकूल हो।

(४) बौद्ध आत्मा व जीव को नहीं मानते जैन आत्मा के आधार पर सब धार्मिक सिद्धान्तों की भित्ति रखते हैं। जैन २४ तीर्थङ्करों को मानते हैं लेकिन बौद्ध अपने धर्म का निकास महात्मा बुद्ध से ही समझते हैं जो महावीर स्वामी के समकालीन थे। जैनों की फिलासफी याने उनके दार्शनिक सिद्धान्त बौद्धों के सिद्धान्तोंसे नहीं मिलते हैं। इनके श्रावकोंके धर्म कर्म बौद्धसाधु और गृहस्थोंके धर्मकर्मोंसे सर्वथा भिन्न हैं। बौद्ध

मांसाहारी हैं और जैनोंमें कोई ऐसा नहीं जो मांस खाता हो। इनके आचार विचार शुद्ध हैं अहिंसा धर्म के सच्चे अनुयायी यह हैं बौद्ध नहीं।

(५) जैन धर्म में ईश्वर का अर्थ सृष्टि कर्त्ता, शुभाशुभ कर्मों का फलदाता तथा अन्य ऐसे ही कार्य करने वाले का नहीं है वे कहते हैं कि ईश्वर वह है कि जो सर्वज्ञ सर्व-शक्तिमान और सर्व-व्यापी है जिसे संसार की रचना से कोई सम्बन्ध नहीं, जिसे कर्मों के फल देने में कोई सरोकार नहीं जिसे मनुष्यों की मनोकामना पूर्ण करने तथा उनके दुष्ट कर्मों को क्षमा करने की कोई झंझट नहीं, जिन्होंने सर्व अपने कर्म बन्धन तोड़ डाले जिन्हें केवल ज्ञान होगया। जिनकी आत्मा सर्वथा मल रहित (राग, द्वेष रहित) होकर अन्तिम विकाशावस्था को प्राप्त हो गई है। यह सब बातें जैनी अपने सिद्धों में मानते हैं इस लिये वह इन्हें ही ईश्वर कहते हैं। यदि इन्हें ईश्वर कहा जाय तो कोई बात अनुचित नहीं है। जैनों के इस अर्थ को देखते हुए हम यह नहीं कह सकते कि जैन स्पष्ट रूप से ईश्वर के अस्तित्व से इन्कार करते हैं।

(६) यह कहना कि 'जैनधर्म के सिद्धान्त योरुपीय दार्शनिक कमेटी के मत से मिलते हैं।' जैन धर्म के साथ अन्याय करना है। कमेटी घोर नास्तिक है वह न परमेश्वर को मानती है और न आत्मा या जीव को।

(७) जैन धर्म का तो मुख्य सिद्धान्त दया पालन है यदि कोई जैन इस सिद्धान्त के अनुसार नहीं चलता है और निर्दयता का बर्त्ताव करता है तो वह जैनों की दृष्टि में भी ऐसा ही पतित और भ्रष्ट है जैसा कि अन्य धर्मावलम्बियों की दृष्टिमें। जैनधर्म कभी उसे अच्छा न कहेगा।

(८) हम तो जहां तक जानते हैं उनमें कोई ऐसी रीति रिवाज है ही नहीं जिससे निर्दयता प्रगट होती हो जिस कार्य में हिंसा और निर्दयता हो वह कार्य उनके मत में सर्वथा त्याज्य है। अन्य धर्मावलम्बियों के मुकाबले में जैन निर्दय और क्रूर कभी साबित नहीं हो सकते।

(९) जैन साधु उच्च श्रेणी के हैं वे अन्य धर्मों के साधुओं से बहुत बढ़े चढ़े हैं और उनकी उत्कृष्टता स्वयं-सिद्ध है।

(१०) इतिहास तो इस बात की गवाही दे रहा है कि विदेशीय लोगों के युद्ध हिन्दुओं के साथ ही हुए और उन्होंने उन पर ही विजय पाकर भारत पर अधिकार जमा लिया। बौद्ध धर्म तो विदेशियों के आने से पहले ही भारत से बाहिर निकाल दिया गया था और जैन धर्म को (उस समय) के हिन्दुओं ने कभी फूलने फलने ही नहीं दिया। जब कभी इसकी वृद्धि हुई तो हिन्दू राजाओं ने अपनी सनातन-धर्मी प्रजा के सहायता से इसका विरोध किया और उसे बढ़ने न दिया। जिस समय हिन्दुस्तान में मुसलमान आये

उस समय हिन्दु-धर्म का ही बोलबाला था जैनोंकी अवस्था गिरी हुई थी। जब तक कोई ऐतिहासिक प्रमाण न हो तब तक यह नहीं कहा जा सकता कि जैनधर्म भारतके अधःपात का एक कारण है।

१३

राजा शिवप्रसाद सतारेहिन्दने लिखा है — कि दो ढाईहजार वर्ष पहिले दुनियां का अधिक भाग जैनधर्मका उपासक था।

जैन और बौद्ध एक नहीं हैं सनातनसे भिन्न भिन्न चले आये हैं, जर्मन देश के एक बड़े विद्वान ने इसके प्रमाण में एक ग्रन्थ छापा है।

चार्वाक और जैन से कुछ सबंध नहीं है जैन को चार्वाक कहना ऐसा है जैसा स्वामी दयानंदजी को मुसलमान कहना है।

१४

श्रीयुत चम्पतराय जी बैरिष्टर लिखते हैं कि—

१– इन्सायक्लोपीडिया में योरोपियन विद्वानों ने लिखा है कि जैनधर्म बौद्धधर्म से प्राचीन है और बौद्धमत ने जैन धर्म से उनकी दो परिभाषायें आस्रव व संवर लेली हैं। अन्तिम निर्णय इन शब्दों में दिया है कि—

जैनीलोग इन परिभाषाओं का भाव शब्दार्थ में समझते हैं और मोक्ष प्राप्ति के मार्ग के सम्बन्ध में इन्हें व्यवहृत करते हैं (आस्रवों के संवर और निर्जरा से मुक्ति प्राप्त होती है) अब यह परिभाषायें उतनी ही प्राचीन हैं जितना कि जैनधर्म है। कारण कि बौद्धों ने इनसे अतीव सार्थक शब्द आस्रव को लेलिया है और धर्मके समान ही उसका व्यवहार किया है। परन्तु शब्दार्थ में नहीं, कारण कि बौद्धलोग कर्म सूक्ष्म पुद्गल नहीं मानते हैं और आत्माकी सत्ता को भी नहीं मानते हैं जिसमें कर्मों का आस्रव हो सके। संवर के स्थान पर वे आसावाक्ख्य को व्यवहृत करते हैं। अब यह प्रत्यक्ष है कि बौद्धधर्म में आस्रवका शब्दार्थ नहीं रहा। इसी कारण यह आवश्यक है कि यह शब्द बौद्धों में किसी अन्यधर्म से जिस में यह यथार्थ भावमें व्यवहृत हो अर्थात जैनधर्म से लिया गया है। बौद्ध संवरका भी व्यवहार करते हैं अर्थात शील संवर और क्रियासंवरमें कहते हैं। यह शब्द ब्राह्मण आचार्यों द्वारा इस भावमें व्यवहृत नहीं हुये हैं। अतः विशेषतया जैन धर्म से लिये गये हैं जहां यह अपने शब्दार्थ रूप में अपने यथार्थभाव को प्रकट करते हैं। इस प्रकार एक ही व्याख्या से यह सिद्ध होजाता है कि जैन धर्मका कर्मसिद्धांत जैनधर्म में प्रारम्भिक और अखंडित रूपमें पूर्व से व्यवहृत है और यह भी कि जैनधर्म बौधधर्म से प्राचीन है।

विदेशी विद्वानों के अभिमत

[१]

सुप्रसिद्ध संस्कृतज्ञ प्रोफेसर डा० हर्मन जेकोबी एम० ए० [illegible] डा० बोन जर्मनी लिखते हैं—

जैनधर्म सर्वथा स्वतन्त्र धर्म है। मेरा विश्वास है कि [illegible] का अनुकरण नहीं है और इसी लिये प्राचीन [illegible] के तत्वज्ञान का और धर्म पद्धति का अध्ययन करने [illegible] के लिये यह बड़े महत्वकी वस्तु है।

---

[२]

पेरिस (फ्रांस की राजधानी) के डाक्टर ए० गिरनाट [illegible] ता० ३-१२-११ में लिखा है— "कि मनुष्य की [illegible] के लिये जैन-धर्म का चारित्र बहुत लाभकारी है यह [illegible] बहुत ही असली, स्वतन्त्र, सादा, बहुत मूल्यवान तथा [illegible] के मतों से भिन्न है तथा यह बौद्ध के समान नास्तिक नहीं है

---

[३]

जर्मनी के डाक्टर जोहन्नेस हर्टल ता० १७-६-१६०८ के पत्र में कहते है कि मैं अपने देश-वासियों को दिखाऊंगा कि कैसे उत्तम नियम और ऊंचे विचार जैन-धर्म और जैन आचार्यों में हैं। जैन का साहित्य बौद्धों से बहुत बढ़ कर है और ज्यों २ मैं जैन-धर्म और उसके साहित्य को समझता हूं त्यों २ मैं उनको अधिक पसन्द करता हूं।

---

[४]

मि० आबे जे० ए० डबाई मिशनरी की सम्मति—

(Description of the character manners and customs of the people of India and of their-institution and ciril)

इस नामकी पुस्तक में जो सन १८१७ में लंडन में छपी है। अपने बहुत बड़े व्याख्यान में लिखा है कि—निःसन्देह जैनधर्म ही पृथ्वी पर एक सच्चा धर्म है और यही मनुष्य मात्रका आदिधर्म है। आदीश्वर को जैनियों में बहुत प्राचीन और प्रसिद्ध पुरुष जैनियों के २४ तीर्थङ्करों में सबसे पहले हुये हैं ऐसा कहा है।

---

[५]

पाश्चात्य विद्वान रेवरेन्ड जे० स्टीवेन्सन साहब लिखते हैं कि :—

साफ प्रगट है कि भारतवर्ष का अध:पतन जैन-धर्म के अहिंसा सिद्धान्त के कारण नहीं हुआ था, बल्कि जब तक भारत वर्ष में जैन-धर्म की प्रधानता रही थी, तब तक उसका इतिहास स्वर्णाक्षरों में लिखे जाने योग्य है, और भारत-वर्ष के ह्रास का मुख्य कारण आपसी प्रतिस्पर्धामय अनैक्य है। जिसकी नींव शङ्कराचार्य के जमाने से जमा दी गई थी।

---

[६]

विद्वान प्रोफेसर मैक्समूलर साहब का मत है कि—निःसंदेह: प्राचीन भारत में किसी धर्मान्तर से कुछ ग्रहण करके एक नूतन धर्म प्रचार करने की प्रथा ही नहीं थी, जैनधर्म हिन्दू धर्मसे सर्वथा स्वतन्त्र है। उसकी शाखा या रूपान्तर नहीं।

---

[७]

डाक्टर फुहरर एपीग्रेफिका इंडिका व्हाल्यूम के पृष्ठ ... व्हाल्यूम २ पृष्ठ २०६, २०७ में लिखते हैं कि जैनियों के

बाईसवें तीर्थकर नेमिनाथ ऐतिहासिक पुरुष माने गये हैं। भगवद्गीता के परिशिष्ट में श्रीयुत बरवे स्वीकार करते हैं कि नेमिनाथ श्रीकृष्ण के भाई (Cousin) थे, जबकि जैनियों के बाईसवें तीर्थङ्कर श्रीकृष्ण के समकालीन थे तो शेष इक्कीस तीर्थङ्कर श्रीकृष्ण से कितने वर्ष पहिले होने चाहियें यह पाठक स्वयं अनुमान कर सकते हैं।

---

[८]

मेजर जनरल जे० सी० आर फरलांग एफ आर ए सी ई आदि सन १८८७ में अपनी पुस्तक के १३ वें १५ वें पृष्ठ पर लिखते हैं—

It is impossible to find a begning for Jainism (Intro. P. 13)

Jainism thus appears an earlist faith of India,

अर्थात— "जैनधर्म के प्रारम्भ का पाना असंभव है। इस तरह यह भारतवर्ष का सब से पुराना धर्म मालूम होता है।"

—o—

[९]

इम्पीरियल गजेटियर आफ इन्डिया व्हाल्यूम दो पृष्ठ [illegible] पर लिखा है कि कोई २ इतिहासकार तो यह भी मानते हैं कि गौतम बुद्ध को महावीर स्वामी से ही ज्ञान प्राप्त हुआ था जो कुछ भी हो यह तो निर्विवाद स्वीकार ही है— कि गौतम बुद्ध ने महावीर स्वामी के बाद शरीर त्याग किया। यह भी निर्विवाद सिद्ध है कि बौद्धधर्म के संस्थापक गौतम बुद्ध के पहिले जैनियों के तेईस तीर्थङ्कर और हो चुके थे।

—o—

[१०]

मिस्टर टी० डब्लू राईस डेविस साहिब ने इन्साइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका० व्हाल्यूम २९ नाम की पुस्तक में लिखा है, यह बात अब निश्चित है कि जैन-मत बौद्ध मत से निःसन्देह बहुत पुराना है और बुद्ध के समकालीन महावीर द्वारा उसका पुनःसंजीवन हुआ है और यह बातभी भले प्रकार निश्चित है कि जैन मतके मन्तव्य बहुत ही जरूरी और बौद्धमत के मन्तव्यों से बिलकुल विरुद्ध हैं, यह दोनों मत न केवल स्वतन्त्र रूप ही से स्वाधीन हैं बल्कि एक दूसरे से बिलकुल निराले हैं।

—o—

जैनधर्म का कुछ परिचय

जगत में हम जिन मनुष्य, पशु और पक्षी आदि जीव जन्तुओं को देख रहे हैं उनमें बहुत से ऐसे जीव हैं जोकि अपने माता और पिता या नर और मादा से ही पैदा होते हैं। इस लिये मनुष्य, हाथी, घोड़ा, कबूतर, मगर और मछली आदि जीव जो आज दीख पड़ते हैं वे, सन्तान प्रति सन्तान (नस्ल दर नस्ल) के कुदरती नियम से हमेशा से ही मानने पड़ेंगे। यही हालत आम, चना और मटर आदि पेड़ों की है यह भी अपने बीज से ही पैदा होते हैं इस लिये बीज और पेड़ की सन्तान से इन्हें भी सदा से ही मानना पड़ेगा। अगर कोई खास समय से इनकी पैदायश कहना चाहे तो उसके सामने यह सवाल पेश होगा कि अगर उससे पहिले इस प्रकार का कोई जीव नहीं था तो उस समय भी बिना माता और पिता या बीज आदि के उनकी पैदायश कैसे हुई? इसके उत्तर में उसे मानना पड़ेगा कि उसके पहिले भी इस प्रकार के जीव मौजूद थे।

जब इस जगत में शरीर-धारी जीवों की सत्ता (मौजूद) सदा से सिद्ध होती है तो यह भी जरूर मानना होगा कि उन

जीवों के ठहरने और रहने आदि के लिये यह जमीन, पीने के लिये पानी, सांस लेने के लिये हवा, भोजन पकाने आदि के लिये आग, उड़ने आदि के लिये आकाश और रात और दिन के लिये चन्द्र और सूर्य आदि पदार्थ (चीजें) भी हमेशा से ही हैं। इससे स्पष्ट है कि यह जगत जोकि इन्हीं सब पदार्थों का समुदाय है या ये ही सब पदार्थ मिल कर जगत कहलाते हैं अनादि से चला आरहा है अर्थात इसको किसीने किसी खास समय में बना कर तय्यार नहीं किया है।

जिस तरह यह संसार हमेशा से (अनादि से) चला आ रहा है उसी तरह आगे भी हमेशा चला जायगा। इसका नाश इसका कदापि न होगा। इस तरह यह भी स्पष्ट है कि जिस प्रकार यह अनादि है उसी प्रकार अनन्त भी। जगत के अनादि और अनन्त होने में यह भाव कदापि नहीं है कि यह सदैव एक ही अवस्था में बना रहता है किन्तु यह है कि समुदाय की दृष्टि से उसका आदि और अन्त कभी भी नहीं होता। आंशिक एवं पर्याय दृष्टि से तो उसमें समय २ पर भूकम्प आदि कारणों के अनुसार अनेक प्रकार के परिवर्तन होते ही रहते हैं; कहीं पर जल का थल और कहीं पर थल का जल हो जाता है।

इस जगत में यह संसारी जीव कर्मबन्धन से बन्धा हुआ सदा से जन्म मरण करता हुआ चला आरहा है जैसे

शुभ अशुभ कार्य करता है तदनुसार इसको सुख दुख मनुष्य देव, पशु आदि योनियां मिलती रहती हैं। समय २ पर इस जगत में कोई २ महान पुरुष अवतार लेते हैं जो कि साधारण जनतासे विशेष ज्ञानी, आदर्श चरित्र वाले होते हैं। जिस समय वे आत्मिक ध्यान और घोर तपस्या से अपने आत्माकी पूर्ण शुद्धि कर लेते हैं उस समय जीवन्मुक्त (अर्हन्त) अवस्था में अन्य जीवों को संसार के जन्म मरण से छूट कर कर्म बन्धन से मुक्त होने का मार्ग बतलाते हैं। उन्हें 'तीर्थङ्कर' (धर्ममयी तीर्थ के करने वाले) कहते हैं।

तीर्थङ्कर

पवित्र भारत भूमि में उन महान व्यक्तियों का अवतार हुआ है जिन्होंने अपने पुण्य कार्यों से विश्व का कल्याण किया। तदनुसार इस आर्य क्षेत्र में श्री रामचन्द्र कृष्ण आदि ऐतिहासिक प्रख्यात पुरुषों से भी करोड़ों वर्षों पूर्व के जमाने में महाराज नाभिराय के यहां 'श्री ऋषभदेव' ने अवतार लिया था। आपने गृहस्थाश्रम में रह कर राज्य-शासन करते हुए प्रजा से हितकर आविष्कार किये। तदनन्तर अपने बड़े पुत्र भरत को, जो कि यहां पर सब से प्रथम विश्वविजेता चक्रवर्ती हुए हैं और जिनके नाम से इस

देश का नाम भी भारतवर्ष रक्खा गया, राज्यभार सौंप कर आप समस्त परिग्रह (सांसारिक पदार्थ यहां तक कि शरीर का वस्त्र भी) छोड़ कर दिगम्बर (वस्त्र-रहित नग्न) मुनि हो गये उस मुनि मार्ग में रह कर आपने घोर तपस्या करके काम क्रोध लोभ माया आदि दोषों पर तथा कर्मों पर विजय प्राप्त की और सर्वज्ञ होकर सर्वत्र धर्म का प्रकाश किया। कषाय (काम क्रोधादि) तथा कर्म आदि को जीत लेने के कारण आपका नाम 'जिन' (कर्मकषायादिकं जयतीति जिनः) प्रसिद्ध हुआ। इसी निमित्त से आपके प्रचारित धर्म का नाम भी 'जैन' (जिनस्य धर्मो जैनः, जिनो देवता यस्येति वा जैनः) रक्खा गया।

मुहनजोदारो में खुदाई करने से जो ५००० वर्ष पुरानी सीलें मिली हैं उन सीलों पर भी बैल के चिन्ह वाली भगवान ऋषभदेव की मूर्ति बनी हुई है। कुछ सीलों पर 'नमो जिनेश्वराय' लिखा हुआ है जिससे सिद्ध होता है कि आज से पांच हजार वर्ष पहले भी भगवान ऋषभदेव की पूज्यता जन-साधारण में ही नहीं, किन्तु राजघरानों में भी थी।

इन्दौर के समीप बड़वानी में पहाड़ पर एक ४२ हाथ ऊंची भगवान ऋषभदेव की मूर्ति (पत्थर की) है। यह ३-४ हजार वर्ष पुरानी अनुमान की जाती है।

भगवान ऋषभदेव के द्वितीय पुत्र बाहुबली भी अपने पिताके अनुरूप महान तपस्वी हुए हैं और भगवान ऋषभदेवके

समान उन्होंने भी मुक्ति प्राप्त की है। उनकी ५७ फीट ऊंची विशाल मूर्ति मैसूर राज्य के चन्द्रगिरि पर्वत पर श्रवण-बेलगोला में है। कला की दृष्टि से इतनी सुन्दर विशाल मूर्ति इस समय कहीं भी नहीं है।

भगवान ऋषभदेव के पीछे लाखों वर्षों के अन्तर से अजितनाथ, संभवनाथ, आदि तीर्थङ्कर हुए। इन्होंने भी अपने २ समय में जैन धर्म का भारी प्रचार किया। बीसवें तीर्थङ्कर मुनिसुव्रत नाथ हुए इन ही के समय में रामायण की भीषण लड़ाई हुई। इनके हजारों वर्ष बाद नमिनाथ तीर्थङ्कर हुए और फिर उनके पश्चात भगवान नेमिनाथ। इतिहास प्रसिद्ध महाभारत का युद्ध इन ही के समय में हुआ। तेईसवें तीर्थङ्कर भगवान पार्श्वनाथ हुए और इनके २५० वर्ष पीछे इस युगके अन्तिम तीर्थङ्कर भगवान महावीर। भगवान महावीरको हुए आज करीब ढाई हजार वर्षके हो चुके हैं। ये सभी तीर्थङ्कर राज्यकुल में पैदा होकर, युवा-वस्था में राज्य छोड़ साधु बन कर, पहिले सर्वज्ञ (तीन लोक तीन काल की सब बातों को एक साथ जानने वाले) जीवन मुक्त हुए। तब उन्होंने धर्म का प्रचार किया उसके पीछे वे पूर्णमुक्त होगये। इस युगमें इस प्रकार यह जैन धर्म आज से करोड़ों अरबों वर्ष पहिले इस भरत खंड में प्रचार में लाया गया तथा उनके अनुयायी करोड़ों बड़े २ ऋषि, मुनि,

राजाओं से और सेठों आदि के द्वारा बराबर प्रचार में आता हुआ अब तक चला आ रहा है।

भगवान महावीर स्वामी के बाद अनेक महान ऋषियों ने जैनधर्मका प्रचार किया। जैन साधु कितने उद्भट विद्वान थे यह बात प्राकृत, संस्कृत, कनड़ी भाषा में बनाये हुये उनके ग्रंथों का अवलोकन करने से ज्ञात होती है। संस्कृत भाषामें जैन ग्रंथ न्याय, व्याकरण, साहित्य, वैद्यक ज्योतिष, दर्शन आदि सभी विषयों पर मिलते हैं। वे ग्रंथ अपने २ विषय के जगमगाते रत्न हैं।

क्षत्रिय राजा भी जैनधर्म के अनुयायी होते रहे हैं। भारत वर्ष की स्वतन्त्रता का आदर्श रक्षक, सिकन्दर के सेनापति सेल्क्यूकस को हराने वाला सम्राट चन्द्रगुप्त जैनधर्मानुयायी ही था। उसका पुत्र और उसका पोता सम्राट अशोक भी २६ वर्षकी उम्र तक जैनधर्मानुयायी रहा। खारवेल, कुमारपाल आदि इतिहास प्रसिद्ध वीर राजा जैनधर्म के भक्त हुये हैं। गंगवंश, नंदवंश आदि अनेक राजवंशों में जैनधर्मकी मान्यता रही आई है। ग्वालियर, बेलगांव आदि के किलों में जैन-मूर्तियां मौजूद हैं। इन सब बातों से साबित होता है कि जैनधर्म पुराने जमाने से राजधर्म के तौर पर मान्य चला आया है।

यह संक्षेपमें जैनधर्मका इतिहास है।

धार्मिक दृष्टि से इस संसार में जैनधर्म के समान विश्व कल्याण करने वाला अन्य कोई नहीं है। जो अहिंसा प्रत्येक छोटे बड़े, चर-अचर, जीवको अपने लिये प्रिय है उस अहिंसा का पूरा रूप जैनधर्मके सिवाय किसी अन्य धर्म में नहीं पाया जाता, इस बातको आपने लोकमान्य तिलक के व्याख्यान में पढ़ लिया है।

इस विषयको यहीं पर संकोच करते हुये जैन धर्मकी कुछ एक चुनी हुई बातें बतला कर पुस्तक समाप्त करते हैं।

जैन धर्म का सार !

१—यह जगत अनादि समय से चला आ रहा है और हमेशा कायम रहेगा इसका न तो कभी समूचा अभाव था और न कभी इसकी किसी समय में किसी ने रचना ही की है। हां ! इसके जीव अजीव पदार्थों की हालतें बदलती रहती हैं।

२- परमात्मा शुद्ध, निर्विकार, अनन्त ज्ञान, अनन्त सुख का भण्डार है। संसार के बनाने बिगाड़ने से उसका कोई सम्बन्ध नहीं।

३—संसारी जीव, पिता पुत्र, बीज पेड़ आदि सन्तान परम्परा से अनादि (बेइन्तहा) समय से चले आ रहे हैं।

अपने कर्मबन्धन को खुद अपने अच्छे बुरे कामों से करते हैं। और शराब के नशे की तरह उसका अच्छा बुरा फल भी दूसरे पदार्थों के निमित्त से खुद पा लेते हैं।

४—परमात्मा के बतलाये हुए मार्ग (रास्ते) पर चलते हुए यह संसारी जीव जब राग-द्वेष, मोह, मान आदि दुर्भावों को अपने आत्मा से बिलकुल दूर हटा कर कर्मबन्धन से छूट जाता है तब सदा के लिये 'मुक्त या परमात्मा' हो जाता है। फिर कभी दुखी नहीं होता।

५—मुक्त आत्मा कर्म-बन्धन छूट जाने से फिर संसारी बन्धन में नहीं आता जैसे छिलका उतरा हुआ चांवल फिर नहीं उग सकता।

६—कर्मबन्धन से स्वतन्त्रता इस जीव को किसी की कृपा से प्राप्त नहीं होती किन्तु अपनी सच्ची, पूर्ण कोशिश (तपस्या) से ही प्राप्त होती है। परमात्मा उसके लिये केवल आदर्श [रास्ता दिखाने वाला] है।

७—प्रत्येक जीव का आत्मा हमारे समान है इस कारण जो दुखकर बातें हम अपने लिये नहीं चाहते वे खराब काम हमको दूसरों के लिये भी नहीं करने चाहिये।

८—किसी भी जीव को बुरी भावना से दुख न देना तथा दुखी जीव का दुख दूर करना ही सबसे बड़ा धर्म है।

९—शराब पीना, मांस खाना, नशा करना, सिगरेट तमाखू पीना, अपने धन को तथा शरीर को तो बिगाड़ते ही हैं

किन्तु आत्मा पर बुरे संस्कार भी जमाते हैं। इस कारण धन, धर्म, स्वास्थ्य [तन्दुरुस्ती] को बचाने के लिये इन चीजों का बिलकुल त्याग कर देना लाभदायक है।

१०—पानी कपड़े से छान कर पीना चाहिये क्योंकि पानी में बहुत छोटे असंख्य जीव होते हैं जो कि बिना छाने पानी पीने से पेट में चले जाते हैं कभी कभी तो छोटे मेंढक (डिंड) मरीखे भी जीव पेट में पहुंच कर रोग पैदा कर देते हैं जैसे कि मुलतान निवासी मूलचन्द कपूर के पेट से ५॥ छटांक का मेंढक निकला था। इस कारण पानी हमेशा कपड़े से छान कर पीना चाहिये।

११—रात को भोजन करना खास करके अनाज की बनी हुई चीजें खाना भी हानिकारक है क्योंकि सूर्य छिप जाने पर असंख्य सूक्ष्म (बहुत बारीक) जीव उस भोजन में आ जाते हैं जो कि बिजली से भी नहीं दीख पड़ते रात को भोजन करने से वे सभी तथा कभी कभी पतंगे आदि भी भोजन के साथ पेट में पहुंच जाते हैं जो कि शरीर और धर्म को नुकसान करते हैं। एक जगह बरात के लिये लोगों ने खीर बनाई उसमें ऊपर छत में से एक काला सांप गिर पड़ा जो कि रात के धुन्धले उजाले में नजर नहीं आया। सांप उसी में मर गया, और उसका विष खीर में मिल गया। उस खीर को जब बरातियों ने खाया तो उनमें से १५-१६ आदमी मर गये।

इस कारण न तो रात को भोजन बनाना चाहिये और न खाना चाहिये।

मेरी भावना !

जिसने रागद्वेषकामादिक, जीते सब जग जान लिया,
सब जीवों को मोक्ष मार्ग का, निस्पृह हो उपदेश दिया।
बुद्ध, वीर जिन, हरि, हर, ब्रह्मा, या उसको स्वाधीन कहो,
भक्तिभाव से प्रेरित हो यह, चित्त उसी में लीन रहो ॥१॥

विषयों की आशा नहिं जिनके, साम्य-भाव धन रखते हैं,
निज-परके हित-साधनमें जो, निश-दिन तत्पर रहते हैं।
स्वार्थ त्याग की कठिन तपस्या, बिना खेद जो करते हैं,
ऐसे ज्ञानी साधु जगत के, दुख-समूह को हरते हैं ॥२॥

रहे सदा सत्संग उन्हीं का, ध्यान उन्हीं का नित्य रहे,
उन ही जैसी चर्या में यह, चित्त सदा अनुरक्त रहे।
नहीं सताऊं किसी जीव को, झूठ कभी नहिं कहा करूं,
पर-धन-वनिता पर न लुभाऊं, संतोषामृत पिया करूं ॥३॥

अहंकार का भाव न रक्खूं, नहीं किसी पर क्रोध करूं,
देख दूसरों की बढ़ती को, कभी न ईर्षा-भाव धरूं।
रहे भावना ऐसी मेरी, सरल सत्य-व्यवहार करूं,
बने जहां तक इस जीवन में, औरों का उपकार करूं ॥४॥

मैत्री-भाव जगत में मेरा, सब जीवों से नित्य रहे,
दीन-दुखी जीवों पर मेरे, उर से करुणा-स्रोत बहे।
दुर्जन-क्रूर कुमार्गरतों पर, क्षोभ नहीं मुझ को आवे,
साम्यभाव रक्खूं मैं उन पर, ऐसी परिणति हो जावे ॥५॥

गुणी-जनों को देख हृदय में, मेरे प्रेम उमड़ आवे,
बने जहां तक उनकी सेवा, करके यह मन सुख पावे।

होऊं नहीं कृतघ्न कभी मैं, द्रोह न मेरे उर आवे,
गुण-ग्रहण का भाव रहे नित, दृष्टि न दोषों पर जावे ॥६
कोई बुरा कहो या अच्छा, लक्ष्मी आवे या जावे,
लाखों वर्षों तक जीऊं या, मृत्यु आज ही आजावे।
अथवा कोई कैसा ही भय, या लालच देने आवे,
तो भी न्यायमार्ग से मेरा, कभी न पद डिगने पावे ॥
होकर सुख में मग्न न फूले, दुख में कभी न घबरावे,
पर्वत-नदी-श्मसान भयानक, अटवी से नहि भय खावे।
रहे अडोल-अकंप निरन्तर, यह मन दृढ़तर बन जावे,
इष्टवियोग-अनिष्टयोग में, सहनशीलता दिखलावे ॥८॥
सुखी रहे सब जीव जगत के, कोई कभी न घबरावे,
वैर-पाप-अभिमान छोड़ जग, नित्य नये मंगल गावे।
घर-घर चर्चा रहे धर्म की, दुष्कृत दुष्कर हो जावें,
ज्ञान-चरित उन्नत कर अपना, मनुज-जन्म-फल सब पावें ॥९
ईति-भीति व्यापे नहि जगमें, वृष्टि समय पर हुआ करे,
धर्मनिष्ठ होकर राजा भी, न्याय प्रजा का किया करे।
रोग-मरी-दुर्भिक्ष न फैले, प्रजा शान्ति से जिया करे।
परम अहिंसा-धर्म जगतमें, फैल सर्वहित किया करे ॥१०॥
फैले प्रेम परस्पर जग में, मोह दूर पर रहा करे,
अप्रिय-कटुक-कठोर शब्द नहिं, कोई मुख से कहा करे।
बन कर सब 'युग-वीर' हृदयसे, देशोन्नति-रत रहा करें,
वस्तु स्वरूप विचार खुशीसे, सब दुख संकट सहा करें ॥११